International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 6.972 Volume 7, Issue 5, May 2020
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

# चूरू जिले के भित्ति चित्रों की चित्रण प्रक्रिया एवं रंग प्रयोग का विश्लेषणात्मक अध्ययन

**डा. नरेन्द्र कुमार**
सहआचार्य, चित्रकला विभाग,
राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

भित्ति चित्रण, मानवीय चेतना और रंग प्रयोग तीनों का प्रादुर्भाव एक ही समय से रहा है। आदि मानव की गुफाओं में किये गए रंग गेरु, रामरज, कोयला आदि के प्रयोग के पश्चात् मानवीय सभ्यता व भित्ति चित्रण तकनीक दोनों में परिवर्तन एवं विकास होता रहा, लेकिन रंगों के लिये प्रकृति पर ही निर्भर रहना पड़ा, जिनमें खनिज रंग हो या वनस्पति आदि। इनमें भी कालक्रमानुसार अनेक प्रयोग व इन्हें तैयार करने की अलग–अलग विधियाँ और सिद्धांत रहे हैं। रंगों की शुद्धता और इन्हें प्रविधि देने की विस्तृत जानकारी हमारे प्राचीन वांग्मय में भी स्थान–स्थान पर मिलती है, जिनमें विष्णु धर्मोत्तर पुराण, शिल्परत्न, मानसोल्लास तथा 18वीं शती के यति मयगल सागर का गुटका आदि है।

विष्णु धर्मोत्तरपुराण में मूल रूप से पांच रंग कहे गये हैं जिनमें श्वेत, रक्त (लाल),

© Associationof Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

पीला, काला और हरा मुख्य कहे गये हैं। परन्तु चित्रकार को वास्तविक रंग के विभाग से मानवकल्पना तथा अपनी बुद्धि से सैकड़ों क्या सहस्रों रंग बना लेने चाहिए।

शिल्परत्न ग्रन्थ में भी प्रमुखतरू पाँच रंगों का ही उल्लेख किया गया है जिन्हें शुद्ध वर्ण कहा गया है, जिनकी निर्माण विधि भी इस ग्रन्थ में बताई गई है। इन शुद्ध वर्णों में लाल, पीला, सफेद और कांला गिना जाता था जिनमें निर्माण के लिये, मिट्टी व पत्थर की प्राप्ति नदी तटों या पहाड़ों से की जाती थी। जिनमें काला रंग ढाकणी (ढक्कन) आदि में तेल का काजल पाड़ कर उससे प्राप्त किया जाता था, और खनिज रंगों को शुद्ध कर उनमें नीम का गोंद डालकर प्रयोग में लिया जाता था।

इसी प्रकार रंगों की मिलावट और उनसे अनेक रंग तैयार करने के विषय में भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में लिखा है कि श्वेत और पीला मिलकर पाण्डु, श्वेत और लाल मिलकर पद्म तथा श्वेत और नीला मिलकर कापोत, पीला और नीला मिलकर हरा, नीले और लाल के मिश्रण से काषाय और लाल व पीला के मिश्रण से गौरवर्ण तैयार होता है।

शिल्प रत्नाकर के अनुसार सफेद और लाल रंग मिलकर गौर, श्वेत काला और वीला मिलकर भूरा तथा सफेद और काला मिलकर गजवर्ण रंग होता है। लाल और पीले के संयोग से बकलफल के समान रंग बन जाता है। पीला एक भाग और लाल दो भाग मिलाने से गहरा लाल रंग बन जाता है। श्वेत एक भाग, पीत दो भाग के संयोग से पीला रंग बनता है तथा एक भाग काला और दो भाग पीला मिलाने से श्मनुष्य वर्ण्य तैयार होता है। हरिताल और नीला के संयोग से श्शुकवर्ण्य सुवापंख–सा हरा तैयार होता है। लाख का रस इंगुर से मिश्रित होने पर गहरा लाल बन जाता है। लाक्षारस और काले के संयोग से जामुन जैसा रंग बन जाता है और इसी लाख के रस और श्वेत के मिश्रण से जाति लिंगवर्ण जावित्री के सदृश रंग तैयार होता है। इंगुर और लाल रंग के मिलने से सुन्दर लक्खी रंग बनता है। काले और नीले के मिश्रण से श्केशवर्ण्य अर्थात बालो के समान रंग तैयार हो जाता है।

इसी प्रकार 18वीं शती के श्यति मयगल–सागस्य नामक ग्रन्थ में भी मुख्य रंग तो पांच ही बताये हैं जिनमें लाल (दो प्रकार का), पीला, सफेद और स्याह (काला) जिनका निर्माण, हिंगुल, येवड़ी, सफेदा और गुली से किया जाता है। इन रंगों से भिन्न अन्य रंग

तैयार करने के लिये अलन्ता, जंघाल, हरताल, स्याह और गेरुआ रंग का भी उपयोग होता है। इस ग्रन्थ के अनुसार विभिन्न प्रकार के रंग निम्न विधि के अनुसार तैयार किये जाते हैं।

नीला रंग – इस रंग में गोदन्ती, हरताल, (गुजराती) और चौखी गुली, जिसमें हरताल दो भाग और गुली एक भाग होनी चाहिए।

गुलाबी – गुलाबी रंग बनाने के लिये बढ़िया सफेद और अलन्ता पोथी (गुली) के मिश्रण से तैयार किया जाता था।

पान का रंग – इस रंग के लिये पेवड़ी एक तोला और गुली आधा तोला मिलाने से पान का रंग बनता था।

नारंगी – सिन्दूर दो भाग और पेवड़ी एक भाग मिलाकर नारंगी रंग बनाया जाता था।

खाकी – खाकी रंग बनाने के लिये सफेद एक तोला, पोथी गोटा तीन तोला और गुली एक टांक मिलाते थे।

गोधूम (गेहूंवा) – सफेदा एक तोला, सिन्दूर एक टाक, पेवड़ी एक टांक को मिलाकर बनाते थे।

स्याह – सफेदा एक तोला, सिन्दूर एक टांक में अलत्ता पोथी का एक टीपा (बूंद) मिलाने से तैयार होता है।

सूआ रंग – सूआ रंग बनाने के लिये जघाल एक तोला पेवड़ी एक टांक मिलाकर बनता है।

आसमानी – यहाँ आसमानी रंग को दो तरह से बनाया गया है। प्रथम विधि में आसमानी रग (नीलाम) के निर्माण हेतु गन्धक एक तोला, गुली दो टांक मिलाये जाते थे।

दूसरी विधि में सफेदा एक तोला में दो टांक गुली मिलाकर तैयार करते हैं।

बैंगनी रंग – यह रंग बनाने के लिये हिंगुल एक तोला, गुली दो टांक, अलत्ता पोथी एक रत्ती तथा सफेदा मिलाया जाता था।

इसी प्रकार अजन्ता के चित्रकारों ने भी गुफाओं के चित्रों में स्थानीय खनिज रंगों को ही परम्परानुगत विधि से तैयार कर प्रयोग में लिया था, जिनमें प्रमुख रूप से सफेद

खड़िया, लाल (गेरुआ, हिरोजी), काला, हरा, भाटा, पीला तथा लेपिस लाजुली, तथा नीला रंग आदि प्रमुख रहे हैं। जिनकी मुख्य विशेषता प्लास्टर में मिश्रण तथा चूने को क्षारात्मक प्रभाव और जलवायु एवं सूर्य के प्रकाश से बचाकर अपने अस्तित्व को बनाये रखना था।

चूरू जिले के भित्ति चित्रों की भी अपनी रंग विशेषता रही है जिसके लिये यहाँ के चेजारे (चितेरे) रंगों की निर्माण विधि एवं उन रंगों से विभिन्न प्रकार के अन्य रंग तैयार करने आदि से भली–भांति परिचित थे। जिनमें खनिज एवं वनस्पति रंग ही मुख्य रूप से काम में लेते थे तथा 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक के पश्चात् जर्मनी से आयातित गहरे रंगों का भी प्रयोग करने लगे थ।

चूरू जिले में रंगों के निर्माण की कला अपनी अलग विशेषता से संयुक्त रही है। जिसके अन्तर्गत यहाँ रंगों में दूध और चीनी अथवा पतासे मिलाकर प्रयोग किये जाते थे। खनिज रंगों में यहाँ प्रमुख रूप से काजल, सिन्दूर, हिंगलू, पेवडी, सफेद (खड़िया), हिरमच गेरु, हरताल, हरा भाटा, नीला आदि प्रमुख रहे हैं। इन सभी रंगों को शुद्ध व तैयार करने के लिये कूटा, पीसा तथा घिसा जाता था। तत्पश्वात् पानी में घोलते थे। उसके बाद उन्हें कई बार छानकर व निथारकर शुद्ध रंग को स्वच्छ चौड़े बर्तनों में रखकर कई दिनों तक सुखाते थे। पानी सूख जाने के पश्वात् इन रंगों को स्थानीय रंग घोटने वाली महिलाओं द्वारा पत्थर की पट्टी (सिलपट्टी) पर दूध और पानी के साथ पिसवाया जाता था, जिससे रंग एकदम मुलायम व लोचपूर्ण हो जाते थे। तत्पश्वात् कार्य–क्षमतानुसार रंग लेते जाते थे और उनमें उबला हुआ दूध व चीनी अथवा पतासा डालकर प्रयोग करते थे।

इनके अतिरिक्त रासायनिक क्रिया से भी रंग तैयार किये जाते थे। प्रमुख रंगों को तैयार करने की विधि निम्नानुसार रही है –

**लाल**

प्रकृति से प्राप्त लाल पत्थर गेरु तथा हिंगलू से तैयार किया जाता था। जिसमें हिंगलू को प्रमुख माना गया है। इसके अतिरिक्त लाल रंग को लाख से भी तैयार किया जाता था, जिसे बरगद, पीपल, बेर की झाड़ी आदि वृक्षों से पायी जाने वाली लाख पेड़ की छाल तथा सुहागा को खरल में घोटकर पानी मिलाकर छान लिया जाता था, तत्पश्चात् इसे उबालकर गाढ़ा होने के पश्चात् सुखाकर इसे पीसा जाता था। पीसने के बाद इसे बारीक छानकर प्रयोग में लिया जाता था, जिसके प्रमुख उदाहरण सुराणा हवामहल का रंग

चौबारा, बजरंगलाल मंत्री का रंग चौबारा आदि प्रमुख हैं। इसी प्रकार लाख से हरा रंग भी बना लिया जाता था जिसे तैयार करने के लिये तांबे के बर्तन का उपयोग करना पड़ता था। जिससे मेहन्दी जैसा हरा रंग बनता था। काला, लाल तथा बैंगनी बनाने के लिये इसी प्रक्रिया को लोहे के बर्तन में करते थे। इस प्रकार की प्रक्रिया चूरू के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी मिलती है।

**हरिताल (पीला रंग)**

इस रंग को तैयार करने के लिये चूरू मे अधिकतर, पेवड़ी, पीली मिट्टी तथा रामरज का ही अधिक प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त कहीं–कहीं गऊ गोली जिसे गाय के गोत्र से तैयार किया जाता था, का उपयोग भी किया गया है। पेवड़ी हरिताल आदि रंगों को तैयार कर दूध और पानी में भिगो कर रख देते थे तथा दूसरे दिन उसे बारीक पीस कर प्रयोग में लेते थे।

**लाजवर्द**

यह रंग प्राचीन काल से ही भारतवर्ष में प्रयुक्त होता रहा है। अजन्ता के भित्ति चित्रों में यह रंग विशेष रूप से गहरा नीला, लाजवर्द तथा राजवर्द आदि नामों से प्रसिद्ध रहा है। यहाँ पर प्रयुक्त नीले रंग को वनस्पति से प्राप्त नील के पौधे को पानी में तीन दिन तक भिगोकर मसल लेते थे, तत्पश्वात् मसले हुए नीले पानी को उबाल कर गाढ़ा करके सुखा लेते थे। सूखने के बाद उसे बारीक पीसकर दूध के साथ प्रयोग में लिया जाता था। बाद में तैयार नील के पाउडर को पानी में घोल कर अर्थात तैयार घोल को प्रयोग में लेते थे। इस नीले रंग का चूरू जिले में 20वीं सदी के दशक व इसके आस–पास के चित्रों में ही अधिक प्रयोग किया गया है। उल्लेखनीय है कि प्रारम्भिक चित्रों में नीले रंग का प्रयोग नहीं के बराबर था। सर्वाधिक नीले रंग का प्रयोग चूरू, सरदार शहर, रतनगढ़, सुजानगढ़ आदि में देखने को मिलता है जो कि सभी चूरू के बाद बसे हुये हैं। सुनहरी रूपहरी एवं रगें की हिलकारी स्वर्णिम तथा रजत रंगों को सुनहरी तथा रूपहरी व रगें की हिलकारी कहा जाता है जिसे निर्मित करने के लिये इनके उपलब्ध बर्क होते थे जिनका कार्य भी चूरू में किया जाता था। इन स्वर्णिम रंगों को तैयार करने के लिए स्वच्छ पानी में सरेस अथवा आकेशिया गोंद के पानी को श्वेत चीनी या काँच के पात्र में लगाकर बर्क को उस पर चिपका दिया जाता था, तत्पश्चात् उसे अंगूठे या हथेली के ऊपरी भाग से घोटते थे,

जिसे आवश्यकतानुसार बर्क लगाए जाते और घोटते थे। इस रंग में जितनी घुटाई होती थी रंग भी उतना ही अच्छा बनता था। घुटाई होने के पश्चात उसे छोड़ देते थे और उसमें पानी डालकर छोड़ देते थे तथा और अधिक शुद्ध करने के लिए एक–दो बूंद नींबू की भी मिला देते थे। तत्पश्चात् उसे दूसरे दिन निथारकर उसमें आवश्यकतानुसार खेरी का गोंद व दूध मिलाकर प्रयोग में लेते थे।

इन स्वर्णिम रंगों का प्रयोग चूरू में आर्थिक उन्नति के कारण व्यापक रूप में प्रयोग किया गया है। जिसमें कई स्थानों पर तो एक ही रंग दीवारों के अन्तर्गत सौ से ढेढ़ सौ तोला सोने के रंग का प्रयोग किया गया है जिनमें चम्पालाल नाहटा की हवेली की बैठक तथा सुराणा हवामहल, मानन्द बांठिया चूरू, माल जी कोठारी की हवेली चूरू इनके अतिरिक्त रतनगढ़, सुजानगढ़ आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त समान रूप से स्वर्णिम रंग प्रायरू सभी जगह प्रयुक्त किए जाते थे।

**खड़िया**

खड़िया का बारीक चूर्ण बनाकर पानी में भिगो देते थे तथा दूसरे दिन उसका पानी बदल देते थे। तत्पश्यात् पत्थर की सिल्ली पर लोढ़ी से पिसाई कराते थे। पिसाई होने के बाद इसमें पानी मिलाकर एक बर्तन में रख देते थे। कुछ दिनों पश्चात् उसका पानी निथार कर रंग को सुखा लेते थे। तत्पश्वात् इसे प्रयोग के समय दूध–पानी के साथ भिगोकर घोल देते थे, कुछ मात्रा इसमें गोंद की भी प्रयोग करते थे। खड़िया के अतिरिक्त यहां चूने से निर्मित खमीर का प्रयोग भी करते थे। यह खड़िया जितनी पुरानी होती थी उतनी ही अच्छी होती थी।

**सिन्दूर**

सिन्दूरी रंग, इसे तैयार करने के लिये सिन्दूर को भेड़ के दूध में मिलाकर अच्छी तरह घोटते थे। नींबू के पानी द्वारा कई बार इसका शुद्धीकरण किया जाता था। उसमें दूध, चीनी व गोंद आदि डालकर प्रयोग में लेते थे।

**काला रंग (काजल)**

इस रंग को तैयार करने के लिये तिल्ली तथा सरसों के तेल अथवा घी का दीपक जलाकर उसके ऊपर मिट्टी का बर्तन रखा जाता है, जिससे दीपक की लौ से मिट्टी के बर्तन पर काजल जमता जाता है। इस तैयार काजल में गुड़ व दूध डालकर पत्थर की

सिल्ली पर पीसा जाता था, जिससे रंग में चिकनाई व चमक उत्पन्न हो जाती थी। बाद में जर्मनी से आयातित रंगों में यह पाउडर के रूप में डिब्बे में आने लगा था, जिसे भी दूध के साथ ही प्रयोग में लिया जाता था।

इन रंगों के अतिरिक्त चूरू के चितेरे (मूल रंगों से) अन्य सहायक रंगों का निर्माण भी करते थे, जिसमें गुलाबी, बैंगनी, सलेटी व एक ही रंग की कई तानें बना कर प्रयोग करते थे।

जर्मनी से आयातित रंगों में यहाँ हिंगलू, लाल बुर्ज पीली बुर्ज, पेवड़ी के शराकी, पेन्डी, गुगल, तोरु फूल आदि प्रमुख रहे हैं।

रंगों के प्रयोग करने के लिए यहाँ पर विभिन्न पशु–पक्षियों के बालों से तूलिका तैयार कर कार्य किया जाता था। इन तूलिकाओं को बकरी व गधे के तथा गिलहरी के बालों से तैयार किया जाता था तथा बाद में आधुनिक ब्रुशों का प्रयोग भी किया जाने लगा था। रंग भरने से पूर्व रेखाचित्र को कोयले, पेन्सिल अथवा खाके से तैयार कर लिया जाता था तथा लम्बी व सीधी रेखा के लिये सूत को कोयले के चूर्ण में डालकर फटका जाता था। रंगों को परिप्रेक्ष्य, पोशाक, मुखाकृतियों, पृष्ठभूमि, साज सज्जा एवं प्राकृतिक दृश्यों के अनुसार भरा जाता था तथा अधिकतर रंगों में स्थानीय जलवायु के अनुसार गहरे नीले, पोले, हरे, काले आदि चमक युक्त तेज रंगों का प्रयोग गाढ़े व पतले रूप में करते थे। रंगों के प्रयोग के पश्चात् उनमें छाया, प्रभाव व पारदर्शी आदि दर्शाकर उनमें खुला की जाती थी जिन्हें चूरू 'फिक' करना कहते हैं इन खुलाई के साथ ही आंखें, नाक, कान, मुंह आदि बनाकर चित्रों को पूर्ण कर दिया करते थे।

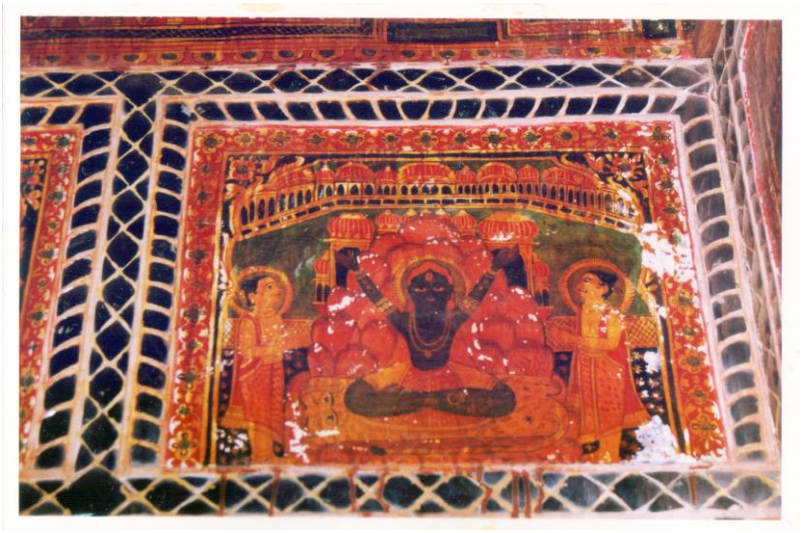

**सन्दर्भ ग्रन्थ :**


1. ए. घोष – अजन्ता म्यूरल्स, पू. 54
2. डॉ. एन. एल. वर्मा – राजस्थानी वित्रण की विभिन्न पद्धतियाँ, पृ. 129
3. डॉ. एस. परमासिवन – टेक्निक ऑफ दी पेन्टिंग प्रोसेज इन द कैलाशनाथ एण्ड वेंकट पेरुमल टेम्पलस् पट कांजोपुरम नेवर, वोल्यूम. सी.एस्स.एल.–II, 938, पृ.757
4. जे. सी. नागपाल – एलालेसिस ऑफ सम मुगल वाल पेन्टिग्स मेटिरिबल, साइन्स एण्ड कल्चर, वाल्यूम–xx, 1964, 7.122–125
5. टी. आर. गैरोला – वाल पेन्टिंग फ्रोम रंग महल चम्बा एण्ड देअर प्रीजर्वेशन स्टडीज इन म्यूसोलोजी, वोल्यूम–iv, 1968, पृ.9–24
6. देवकी नन्दन शर्मा – भित्ति चित्रण की जयपुर प्रणाली और इसका प्रमुख शिक्षण केन्द्र, वार्षिकी ललित कला अकादमी, पृ. 5
7. ममता चतुर्वेदी – जयपुर शैली के भित्ति चित्र, पृ. 38
8. गोविन्द अग्रवाल – चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, पृ. 230
9. बनराज जोशी – चूरू दर्शन, पृ. 48, 49
10. स्थानीय चेजारा उस्मान अली के अनुसार
11. स्थानीय श्रेष्ठी के मुनीम श्री हरिप्रसाद शर्मा, चूरू
12. स्थानीय चेजारा रमजान एवं अली के अनुसार
13. चित्रकार अली के अनुसार
14. बनराज जोशी – चूरू दर्शन, पृ. 55
15. स्थानीय इतिहासकार, श्री गोविन्द अग्रवाल के अनुसार
16. सुबोध कुमार अग्रवाल एवं चेजारों के अनुसार जानकारी
17. श्वेतो रक्तस्तथा पीत कृष्णो हरित मेव च।
    मूलवणः सामख्याताः पन्च पार्थिवत्सतं।। (विष्णुधर्मोत्तर 27 वां अध्याय, श्लोक 8)
18. सितपीत समायोगः पाण्डुवर्ण इतस्मृत। सितरक्त समायोगः पद्मव इति स्मृतः।।
    सितमील समायोगः कापोतं नाम जायते। पीतनी लसमायोगातद्धरितो नाम जायते।।
    नील रक्त समायोगात काषायोनाम जायते। खत पीत समायोगाद गौर इत्यमिधा चेते।।
19. बद्रीनाथ मालवीय – विष्णुधर्मोत्तर में चित्रकला, पृ. 47

20. डॉ. ब्रजमोहन जावलिया – मध्यकालीन चित्र कर्म में प्रयुक्त रंगों की निर्माण विधि, वरदा, 1977
21. डॉ. ए. घोष – अजन्ता म्यूरल्स, पृ.
22. स्थानीय चितेरों रमजान, अली तथा मुनीम श्री हरिप्रसाद आदि के कथनानुसार
23. स्थानीय चेजारों के प्रयुक्त औजारों की जानकारी के अनुसार डॉ. एन. एल. वर्मा – राजस्थान की चित्रण की विभिन्न विधियां, पृ. 147, 148